International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

प्राचीन भारतीय मुद्राओं का उद्भव एवं प्राचीनता : एक संक्षिप्त अवलोकन

धीरेन्द्र सिंह
(शोध छात्र)
प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

प्रागैतिहासिक ताम्राश्मयुगीन सभ्यता के अभ्युदय काल से सम्पूर्ण वैश्विक सभ्यता से एक उत्क्रन्ति पैदा हुई। इस काल में मानव धातुओं की ओर आकृष्ट हुआर और नवपाषाणिक मानव ने परम्परागत वस्तुविनिमय के माध्यम से सीमाओं को विश्रृंखलित कर उपार्जित स्वर्ण, रजत एवं ताम्र की उपयोगिता की ओर ध्यान दिया। भारतीय ऐतिहासिक अध्ययन के स्रोतों में शाब्दी तथा पदार्थी युगपत रीति से महत्वपूर्ण संसाधन मान्य है। आधुनिक पुरातत्व ने पदार्थी संसाधनों में मुद्रा को वरीयता प्रदान की है। प्राचीन आर्थिक क्रियाओं के शोधात्मक अध्ययन से मुद्राओं के उद्भव एवं प्राचीनता की अन्वेषणा की ओर हम अग्रसर है। सामान्यतया शेषवत अनुमान के आधार पर यह स्वीकार किया जाता है कि प्रारम्भिक, वाणिज्यिक क्रियाओं का माध्यम प्रस्तर धातु एवं शंख से निर्मित मनके रहे होगें।[1] यद्यपि कांस्यकालीन नगर सभ्यता सैन्धव सरिताओं की अर्न्तवेदी में पुराविदों द्वारा ज्ञात की गयी किन्तु मुद्राओं का स्पष्ट अभिज्ञान नहीं किया

जा सका। प्राचीन भारतीय मुद्राओं के उद्भव का संकेत शाब्दी परम्परा से प्राप्त होता है जिसका एक संक्षिप्त अवलोकन अनुलिखित पंक्तियों में ध्यातव्य है: –

प्राचीन भारतीय मुद्राओं के उद्भव एवं प्राचीनता का परिचय हमें हड़प्पा सभ्यता की समकालीन सरस्वती घाटी, में वैदिक समाज के प्रचलित शब्दों के प्रयोग में दिखलाई पड़ता है। ऋग्वेदीय सन्दर्भों से संकेतित है कि इस काल में गाय विनिमय का माध्यम थी। ऋग्वेद की एक ऋचा काल में गाय विनिमय का माध्यम थी। ऋग्वेद की एक ऋचा में इन्द्र की प्रतिमा को गायों के बदले विक्रय करने का संकेत प्राप्त होता है।[2] ऋग्वेद की एक अन्य ऋचा में एक ऋषि द्वारा इन्द्र की एक प्रतिमा को शत् सहस्र एवं दस सहस्र गायों के बदले में देने से निषिद्ध करने का उल्लेख प्राप्त होता है।[3] वैदिक साहित्य में दक्षिणा के रूप में ऋत्विकों को गायें दिये जाने का भी उल्लेख हैं।[4]

पूर्व वैदिक समाज में गाय के अतिरिक्त अश्व, रथ, स्वर्णाभूषण आदि भी धन के रूप में स्वीकृत थे। दान स्तुतियों में पुरोहितों ने इनका दान करने वाले राजाओं की प्रशंसा की है। स्वर्णाभूषण, आकार एवं भार में कम किन्तु बहुमूल्य होने के कारण विशेष आकर्षण के केन्द्र बने। ऋग्वेद में 'निष्क' शब्द का चार स्थानों पर उल्लेख हुआ है। ई0 थामस,[5] डी0आर0

भण्डारकर[6], एस0सी0 दास[7] एवं ए0एस0 अल्टेकर[8] प्रभृति इतिहासकार ''ऋग्वेदीय निष्क'' को मुद्रा स्वीकार करते हैं और इस प्रकार वे भारतीय मुद्रा का आरम्भ ऋग्वेदीय काल से ही स्वीकार करते हैं। ऋग्वेद की एक अन्य ऋचा में राजा भप्य द्वारा कक्षीवतन्त को सौ अश्व और सौ निष्क दिये जाने का उल्लेख है।[9] ऋग्वेद के आठवें मण्डल में हम एक ऋषि को 4000 एवं 8000 निष्क दान देने वाले राजा की प्रशंसा करते हुए पाते हैं।[10] ध्यातव्य यह है कि यदि निष्क आभूषण होता तो इतनी अधिक संख्या में दान दिये जाने का कोई औचित्य नहीं होता। अतः निष्क का व्यवहार मुद्रा के रूप में भी होता रहा होगा।[11]

मुद्राओं के उद्भव के सम्बन्ध में शाब्दी परम्परा में ''शतमान'' शब्द का प्रयोग सम्भवतः एक सौ रत्ती के वृत्ताकार धातु पिण्ड के लिए किया गया प्रतीत होता है। वैदिक साहित्य में शतमान शब्द का प्रयोग एक सौ रत्ती के वृत्ताकार धातु पिण्ड के लिए हुआ प्रतीत होता है। उत्तरवैदिक साहित्य में शतमान का उल्लेख अधिकांशतः स्वर्ण एवं रजत के विशेषण के रूप में हुआ है। संहिताओं[12] ब्राह्मणों[13] एवं श्रौतसूत्रों[14] में शतमान का अनेकशः उल्लेख स्वर्ण एवं रजत के धातु खण्डों के विशेषण के रूप में हुआ है। डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल भी शतपथ ब्राह्मण के एक संदर्भ के आधार पर शतमान को स्वर्ण मुद्रा मानते हैं।[15] यद्यपि कतिपय

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

विद्वानों ने शतमान को स्वर्ण मुद्रा के रूप में स्वीकार नहीं किया है किन्तु रजत शतमान को मुद्रा के रूप में स्वीकार किया है।

सर्वप्रथम इस तथ्य की ओर हमारा ध्यान प्रो0 अजय मित्र शास्त्री ने आकृष्ट किया था। प्रो0 शास्त्री मैत्रायणी संहिता में उल्लिखित रजत शतमान को रजत मुद्रा स्वीकार करते हैं।[16] यह सामान्यतः स्वीकृति है कि पाणिनी की अष्टाध्यायी में उल्लिखित शतमान रजत मुद्रा है।[17] रजत शतमान को भी सौ रत्ती का ही होना चाहिए। ध्यातव्य है कि गान्धर क्षेत्र से प्राप्त श्लाका मुद्रा की तौल भी लगभग सौ रत्ती अथवा 175 ग्रेन के बराबर है। इसे सामान्यतः शतमान की संज्ञा दी जा सकती है। शतमान एवं श्लाका मुद्रा की समानता की ओर सर्वप्रथम इतिहासकारों का ध्यान ई0एच0 वाल्श ने आकृष्ट किया था।[18] डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल ने भी शतमान एवं श्लाका मुद्रा का तादात्म्य स्वीकार किया है। यदि मैत्रायणी संहिता में उलिखित शतमान का समीकरण श्लाका मुद्रा से स्थापित मान लिया जाय, जैसा कि उपर्युक्त विद्वानों ने माना है तो भारतीय मुद्रा की प्राचीनता को 1000 ई0पू0 तक मानने में कोई कठिनाई नहीं होगी। इस समीकरण के आधार पर ही प्रो0 अजय मित्र शास्त्री भारतीय मुद्रा की प्राचीनता को सहस्र ई0पू0 तक स्वीकार करते हैं। उल्लेखनीय हे कि कनिंघम महोदय ने भी भारतीय मुद्रा की प्राचीनता को 1000 ई0पू0 तक

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

रेखांकित किया है। जैसा कि पहले कहा गया है कि रजत शतमान की प्राचीनतम उल्लेख मैत्रायणी संहिता में प्राप्त होता है। इसका उल्लेख पाणिनी की अष्टाध्यायी एवं कात्यायन श्रौत सूत्र में भी मिलता है। पाणिनी की अष्टाध्यायी का काल सामान्यतः ई0पू0 की पांचवीं शताब्दी माना जाता है। यद्यपि रजत शतमान का उल्लेख मनुस्मृति में भी प्राप्त होता है। यदि उपर्युक्त विद्वानों के मत को स्वीकार कर लिया जाय तो यह माना जा सकता है कि रजत निर्मित शतमान मुद्रायें 1000 ई0पू0 से लेकर मौर्य साम्राज्य की स्थापना तक प्रचलित थी।

वैदिकोत्तर काल में भारतीय समाज में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। बुद्ध के काल तक ग्रामवासिनी वैदिक संस्कृति अनेकत्र नगरवासिनी हो गयी तथा भारतीय अर्थव्यवस्था द्रव्य युग में प्रविष्ट हुई। इस काल की मुद्राओं के सम्बन्ध में सूत्र साहित्य, त्रिपिटक साहित्य, पाणिनी की अष्टाध्यायी तथा जातकों के अतिरिक्त पुरातात्विक साक्ष्यों से भी प्रचुर प्रकाश पड़ता है। पाणिनी की अष्टाध्यायी में निष्क, शतमान, कर्षापण, विशंतिक, त्रिशंतिक एवं शाण जैसे मूल्य बोधक धातु खण्डों के मान्य नामों का उल्लेख मिलता है। पाणिनी की अष्टाध्यायी के तीन सूत्रों में निष्क का उल्लेख हुआ है। इनमे ंसे प्रथम दो सूत्रों में निष्क का प्रयोग वस्तुओं के

क्रय के सम्बन्ध में हुआ है। जातक कथाओं में निष्क का उल्लेख मुद्रा के रूप में हुआ है।

महाजनपद काल में प्रायः मुद्रा के दो प्रकारों का उल्लेख साहित्य में प्राप्त होता है – शतमान एवं कर्षापण कात्यायन श्रौत सूत्र में अश्वमेघ के प्रसंग में 100 स्वर्ण शतमान दक्षिणा के रूप में देने का उल्लेख है।[19] श्रौत सूत्रों का समय पांचवी छठी शताब्दी ई0पू0 माना जाता है। पाणिनी की अष्टाध्यायी में शतमान एवं शाण द्वारा वस्तुओं को क्रय करने का उल्लेख मिलता है।[20] इनसे सम्बन्धित सूत्रों की व्याख्या के आधार पर शतमान एवं शाण दोनों ही मुद्रा प्रतीत होते हैं।

शाब्दी स्रोत स्वर्ण, रजत एवं ताम्र के कर्षापणों का उल्लेख करते हैं। स्वर्ण कर्षापण, सुवर्ण एवं निष्क के नाम से भी जाना जाता था, जबकि रजत कर्षापण, पुराण एवं धरण के नाम से विख्यात था। ताम्र कर्षापण पण के नाम से भी लोकप्रिय था। स्वर्ण कर्षापण 80 रत्ती अर्थात 146.4 ग्रेन के बराबर होता था। यही तौल ताम्र के कर्षापण का भी था। स्वर्ण एवं ताम्र की तुलना में रजत की उपलब्धता भारत में बहुत कम थी। सम्भवतः इसी कारण रजत कर्षापण का तोल स्वर्ण एवं ताम्र कर्षापण की तुलना में कम था। इसका तोल 32 रत्ती अर्थात 58.56 ग्रेन था। स्थानीय स्रोतों में इतना रजत उपलब्ध नहीं था कि बड़े पैमाने पर मुद्राओं का

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

निर्माण हो सके। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि भारत में रजत मुद्राओं का बड़े पैमाने पर निर्माण पश्चिम के साथ व्यापारिक सम्बन्ध के साथ ही प्रारम्भ हुआ होगा।

पाणिनी की अष्टाध्यायी में कर्षापण के विभिन्न उप विभागों का उल्लेख मिलता हे। यथा–अर्धकर्षापण, ''पादकर्षापण'', द्विमाषक, माषक इत्यादि।

ऐसा प्रतीत हेता है कि पाणिनी के अष्टाध्यायी के काल तक रजत एवं ताम्र के विभिन्न प्रकार की मुद्राओं का प्रचलन आरम्भ हो गया था। पाणिनी, आहत मुद्राओं पर चिन्हों के टंकन की क्रिया से भी भलीभांति परिचित थे। इससे यह निश्चय रूप से प्रमाणित होता है कि पाणिनि के अष्टाध्यायी के काल तक मुद्रा प्रणाली का विकास हो चुका था।

स्पष्टतः मुद्रा की प्राचीनता का सूचक कोई भी पुरातात्विक साक्ष्य छठीं शताब्दी ई0पू0 के पहले का उपलब्ध नहीं है। उल्लेखनीय हैकि पुरातात्विक अन्वेषणों में चित्रित धूसर मृदभाण्डों के स्तरों से भारत की प्राचीनतम ज्ञात आहत मुद्राएं उपलब्ध नहीं हुयी है। सर्वप्रथम आहत मुद्राओं की प्राप्ति कृष्णमार्जित मृदभाण्डों के स्तरों से होती है। हस्तिनापुर के उत्खनन के जिस स्तर से आहत मुद्राएं प्राप्त हुई है, उनका समय बी0बी0 लाल ने छठीं शताब्दी ई0पू0 निर्धारित किया है। इस प्रकार कृष्णमार्जित

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

मृदभाण्डों के काल में आहत मुद्राओं का सुप्रचलित होना पुरातात्विक दृष्ट से प्रमाणित है। ए0एल0 वाशम महोदय पुरातात्विक साक्ष्यों को दृष्टि में रखते हुए ही भारत में मुद्रा की प्राचीनता को बुद्ध काल से पूर्व नहीं रखते।

वस्तुतः पुरातात्विक एवं शाब्दी दोनों ही स्रोतों से छठीं शताब्दी ई0पू0 में भारत में विकसित मुद्रा प्रणाली का अस्तित्व प्रमाणित होता है। यद छठीं शताब्दी ई0पू0 में विकसित प्रणाली को स्वीकार किया जाय तो मुद्रा की प्राचीनता को सातवीं शताब्दी ई0पू0 तक रेखांकित किया जा सकता है। क्योंकि आरम्भिक मुद्रा के निर्माण एवं उसके विकास में अवश्य ही सौ वर्ष लग गये होगें। उल्लेखनीय है कि अनन्त सदाशिव अल्तेकर मुद्रा की प्राचीनता को सातवीं शताब्दी ई0पू0 में रखने के पक्ष में है। डा0 परमेश्वरी लाल गुप्त भी सातवीं शताब्दी ई0पू0 तक ही मुद्रा की प्राचीनता को स्वीकार करते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि भारत में मुद्रा प्रणाली का उदय उत्तर वैदिक काल के अन्तिम चरण में व्यापार वाणिज्य एवं नगरीकरण के साथ आवश्यकता जनित कारणों से सम्भव हुआ। वैदिक काल में प्रचलित निश्चित तौल के धातु खण्डों ने ही इस युग के अन्तिम

चरण में परिवर्तित अर्थव्यवस्था एवं राज्य संस्था के विकास के साथ मुद्रा का स्वरूप ग्रहण कर लिया।

संदर्भ सूची

1. मैन मेक्स हिमसेल्फ पृ0 115
2. ऋग्वेद 4,14,10 ''कः इमं दशार्भिर्ममेन्द्र धेनुभिः।''
3. ऋग्वेद 8.1.5 ''महे चन त्वाम द्रिवः पराशुतकायदेयाम्।
4. ऐत0 ब्रा0 9.32.6, 8.37.7, 8.38.83
5. ई0 थामस, एन्शियेन्ट इण्डियन वेट, पृ0 34
6. डी0आर0 भण्डारकर, लेक्चर्स आन एन्शियेन्ट इण्डियन न्यूमिस्मेटिक 1921
7. ए0सी0 दास, ऋग्वैदिक इण्डिया, 1925, पृ0 140
8. ए0एस0 अल्टेकर डो0एन0एस0आई0 1, पृ0 8
9. ऋग्वेद 1.126.2
10. ऋग्वेद, 8.2.41
11. डा0 राजवन्त राव, प्राचीन भारतीय मुदाएं, पृ0 16–17, वाराणसी, 1998
12. तैत्तिरीय संहिता 2–3, 2–5, मैत्रायणी संहिता 2–3, 2 काठक संहिता 8–5

13. तैत्तिरीय ब्राह्मण 1–3, 7, 7, शतपथ ब्राह्मण 15–4, 3, 24–112

14. कात्यायन श्रौतसूत्र 13–30

15. शतपथ ब्राह्मण 5.516

16. क्रोनोलॉजी ऑफ दी पंचमार्कड क्वायनस पृ0 112–120

17. ज0न्यू0सो0इ0 15, पृ0 20–21, 29–30

18 ई0एच0सी0 वाल्श पंचमार्क्स, क्वायन्स फ्राम तक्षशिला।

19. कात्यायन श्रौतसूत्र 16.30

20. अष्टाध्यायी।